विज्ञान और विज्ञान–शिक्षण पर शिक्षकों के विचार

–ऋचा गोस्वामी

सीखने–सिखाने की प्रक्रियाएँ सुचारू रूप से आगे बढ़ें यह सुनिश्चित करने के लिए एक शिक्षक जो भी कुछ करता है, वही शिक्षणशास्त्र है। कई कारक, जैसे विषय की प्रकृति, पाठ्यचर्चा में विषय विशेष को सम्मिलित करने का उद्देश्य, विद्यार्थियों का आयु समूह, शिक्षक के पास उपलब्ध पारम्परिक शिक्षण–विधियाँ, विद्यार्थियों के बारे में शिक्षक का नज़रिया आदि इसे प्रभावित कर सकते हैं। अन्त में जो कारक दिमाग़ में आता है, वह यह है कि विषय के प्रति समाज का व्यापक नज़रिया क्या है। शिक्षक स्वयं समाज का हिस्सा हैं और अभिभावक, भाई–बहन, पड़ोसी, विद्यार्थी, नौकरी ढूँढने वाले लोग आदि अनेक भूमिकाओं में समाज में उनकी भागीदारी की तुलना में, शैक्षणिक संवाद में उनकी भूमिका काफ़ी कम है। शिक्षणशास्त्र को दो तरह से समझा जा सकता है। एक, वह जिससे हम शिक्षण–प्रशिक्षण के दौरान रूबरू होते हैं और दूसरा, जो हमारी आम धारणाओं, हमारे स्कूली अनुभवों आदि के आधार पर बनता है। इस दूसरे प्रकार को हम प्रचलित शिक्षणशास्त्र (folk pedagogy, ब्रूनर, 1996) कह सकते हैं। इस पर्चे में यह समझने का प्रयास है कि विज्ञान का प्रचलित शिक्षणशास्त्र, विज्ञान की प्रकृति से ज़्यादा विज्ञान से जुड़ी प्रमुख अपेक्षाओं से सम्बद्ध है।

यह पर्चा तीन हिस्सों में बँटा हुआ है। पहले हिस्से में बताया गया है कि राष्ट्रीय महत्व के दो महत्वपूर्ण दस्तावेज़ों 'शिक्षा आयोग की रिर्पोट (1964)' और 'विज्ञान–शिक्षण का पोजीशन पेपर (2006)' में उभरते हुए विज्ञान–शिक्षण के अर्थ और अपेक्षाओं को किस तरह प्रस्तुत किया गया है। विज्ञान–शिक्षण के महत्व, इसकी प्रकृति, उद्देश्यों और शिक्षणशास्त्र पर इसके प्रभाव के बारे में होने वाले आधिकारिक/औपचारिक संवाद को समझने में ये दस्तावेज़ हमारी मदद करेंगे। दूसरे हिस्से में विज्ञान और शिक्षण के बारे में वर्तमान और भावी शिक्षकों के नज़रियों को प्रस्तुत किया गया है। तीसरा हिस्सा प्रस्तुत करता है कि विज्ञान और शिक्षणशास्त्रीय समझ के बारे में शिक्षकों की अवधारणाएँ आधिकारिक संवाद से काफ़ी अलग हैं और इसका असर सीखने–सिखाने की प्रक्रियाओं पर अवश्य पड़ता है।

1. राष्ट्रीय दस्तावेज़ों में विज्ञान व विज्ञान–शिक्षण

वर्ष 1960 से 2006 के दौरान हमारे देश में शिक्षा से जुड़े महत्वपूर्ण और सबसे व्यापक दस्तावेज़ों में से एक है – शिक्षा आयोग (ई.सी.) की रिर्पोट, जिसे कोठारी कमीशन की रिर्पोट के नाम से भी जाना जाता है। इसके बाद में कई अन्य दस्तावेज़ जैसे राष्ट्रीय शिक्षा नीति (1986), राष्ट्रीय पाठ्यचर्चा की रूपरेखा (1975 से शुरू हो कर 1988, 2000 और 2005) और शिक्षा का न्यूनतम स्तर आदि आये हैं। इन सभी दस्तावेज़ों में विज्ञान और विज्ञान–शिक्षण सम्मिलित है। कोठारी आयोग की रिपोर्ट ने वास्तव में विज्ञान–शिक्षण के महत्व और इसके लिए वांछित परिप्रेक्ष्य के बारे में कई तरीक़ों से अवगत करवाया है। इन दस्तावेज़ों में विज्ञान को अलग–अलग तरह से देखा और प्रस्तुत किया गया है। इस खण्ड में हम देखेंगे कि शिक्षा आयोग की रिर्पोट और विज्ञान–शिक्षण पर पोजीशन पेपर, जो कि राष्ट्रीय पाठ्यचर्चा की रूपरेखा (एन.सी.एफ.) 2005 के साथ प्रकाशित हुआ था, इन दोनों में विज्ञान–शिक्षण को किस तरह से देखा गया है।

कोठारी आयोग की रिपोर्ट

किसी भी रिपोर्ट को उसके सन्दर्भ से समझा जाना चाहिए जो कि समय और स्थिति दोनों के द्वारा परिभाषित किया जाता है। 1960 के दौरान भारत एक ऐसा देश था जो खाद्य संकट से संघर्ष कर रहा था और औपनिवेशिक साम्राज्य के अधीन उत्पीड़न से बाहर आने की प्रक्रिया में था। तो ये समझना आसान हो जाता है कि शिक्षा आयोग की रिर्पोट का मुख्य आधार शिक्षा और राष्ट्रीय विकास था। भारत को एक आधुनिक और प्रौद्योगिक देश बनाने के सपने को पूरा करने के लिए यह आवश्यक था कि तकनीकी क्षमता वाले लोग तैयार किये जायें। और वैज्ञानिक विचारों के प्रति आम स्वीकृति हो। ऐसे में वैज्ञानिक स्वभाव, वैज्ञानिक दृष्टिकोण, वैज्ञानिक आस्था और वैज्ञानिक पद्धति जैसे वाक्यांश काफ़ी चर्चा में रहे हैं (खान, 2018)। इस रिर्पोट में राष्ट्रीय विकास का पथ प्रदर्शित करने के लिए सुझाये गये दो केन्द्रीय विचार निम्नलिखित थे :

- भौतिक संसाधनों का विकास
- मानवीय संसाधनों का विकास

रिर्पोट के अनुसार देश में भौतिक संसाधनों का विकास औद्योगीकरण और अनुसंधान के द्वारा किया जाना था और मानवीय संसाधनों का विकास शिक्षा के द्वारा किया जाना था। रिर्पोट में दोहराया गया है कि देश को विकास के लिए ऐसे मानवीय संसाधन की ज़रूरत है जो विज्ञान के क्षेत्र में होने वाले विकास से अवगत हों और जो उत्पादकता में वृद्धि के लिए तकनीकी का उपयोग कर सकें। यह स्पष्ट है कि रिर्पोट में जिस प्रकार के औद्योगिक और कृषि–विकास की बात

की गयी है उसके लिए शोधकर्ता और इंजीनियर जैसे लोगों की ज़रूरत कम और ऐसे शिक्षित कर्मचारियों की ज़रूरत ज़्यादा है जो खेतों और कारखानों में तकनीकी प्रगति को काम में लेने के लिए तैयार हों।

शुरुआती कुछ पृष्ठों में समकालीन दुनिया का वर्णन करने के लिए रिपोर्ट के लेखक "विज्ञान–आधारित", "प्रौद्योगिक संचालित" और "आधुनिक" जैसे शब्दों का प्रयोग करते हैं। रिर्पोट का सन्दर्भ यह तय करता है कि आगे के पृष्ठों में क्या होगा। स्पष्ट रूप से ज़ोर विज्ञान–शिक्षण पर ही है। एक तरफ़ जहाँ रिपोर्ट में कृषि के लिए शिक्षा के साथ कृषि और विज्ञान–अनुसंधान को प्राथमिकता देने की ज़रूरत पर बल दिया गया है, वहीं दूसरी तरफ़ औद्योगिक प्रगति के लिए शिक्षा पर भी ज़ोर दिया गया है। विज्ञान और तकनीकी को देश के लोगों की समृद्धि, कल्याण और सुरक्षा का स्तर निर्धारित करने वाले कारकों के रूप में देखा गया है।

रिर्पोट का सोलहवाँ अध्याय विज्ञान–शिक्षण और अनुसंधान पर केन्द्रित है और यह दावा करता है कि विज्ञान की वजह से न केवल भौतिक माहौल में बदलाव आया है, बल्कि मानव–मस्तिष्क और विचारधारा में भी खुलापन आया है। यह दस्तावेज़ विज्ञान–शिक्षण को तार्किक नज़रिया और वैज्ञानिक मनोवृत्ति/प्रवृति विकसित करने के माध्यम के रूप में प्रदर्शित करता है। यह दस्तावेज़ यह चिन्ता भी ज़ाहिर करता है कि यदि गुणवत्तापूर्ण विज्ञान–शिक्षण सुनिश्चित नहीं किया जाता है तो यह "बेकार जानकारियों का बोझ" या उससे भी बदतर "एक तरह का अन्धविश्वास" बन जायेगा (पृष्ठ 389)।

इस तरह से ये रिर्पोट विज्ञान–शिक्षण के दो पहलुओं को उभारती है, एक तो ज्ञान का पुलिन्दा और दूसरा अनुसंधान या ज्ञान–निर्माण का एक प्रकार। रिर्पोट के अनुसार ज्ञान का पुलिन्दा हर दस वर्ष में दोगुना हो जाता है और उतनी ही तेज़ी–से पुराना (Obsolete) भी हो जाता है। दूसरी तरफ़ अनुसंधान के एक प्रकार के रूप में यह एक निश्चित प्रक्रिया है जो विकसित विश्व के मुख्य आधार, समृद्धि और प्रगति के माध्यम के रूप में देखा गया है। वैज्ञानिक पद्धति जिसमें विस्तृत अवलोकन, अटकल लगाना, परीक्षण सोचना, निष्कर्ष निकालना शामिल है, की आमतौर पर स्कूली कक्षा में कोई जगह नहीं होती (मुखर्जी, 2017)।

रिर्पोट में विज्ञान–शिक्षण को राष्ट्रीय विकास के साथ जोड़ा गया है और वह भी अनुसंधान युक्त माहौल में। इस बात पर ज़ोर दिया गया है कि विश्वविद्यालय आधारभूत वैज्ञानिक अनुसंधान के स्थल होने चाहिए और सभी स्तर पर विज्ञान–शिक्षण को प्रयोगों और फील्ड–कार्यों से जोड़े जाने की ज़रूरत है और

स्थानीय वातावरण और उद्योगों/कारखानों में इसके अनुप्रयोग पर बल दिया गया है।

विज्ञान–शिक्षण का पोजीशन पेपर

दूसरा दस्तावेज़ जो लिया गया है, वह है विज्ञान–शिक्षण पर पोजीशन पेपर (एन.सी.ई.आर.टी., 2006) जो कि शिक्षा आयोग की रिर्पोट के चार दशक बाद आया था, तब तक इस क्षेत्र में काफ़ी कुछ काम हो चुका था। भारत ने हरित क्रान्ति देख ली थी जिसकी वजह से एक तरफ़ खाद्य आत्मनिर्भरता तो प्राप्त हो गयी थी लेकिन दूसरी तरफ़ इसकी वजह से आनुवांशिक रूप से संशोधित फ़सलों, खाद्य–शृंखला में हानिकारक उर्वरकों, भूजल ह्रास जैसी कई चिन्ताओं ने जन्म ले लिया था। तब से अब तक काफ़ी औद्योगिक विकास हो चुका था और इसके चलते वातावरण पर इसके प्रभाव से जुड़ी चिन्ताओं का उभरना स्वाभाविक ही था और इस सबके अलावा "तकनीकी प्रगति" के साथ यह भाव भी पनपा कि ग़रीब और अमीर के बीच का अन्तर और बढ़ गया है, इसलिए विज्ञान और तकनीकी को क्षमता लाने के माध्यम के रूप में देखने का सपना चकनाचूर हो गया।

इसलिए यह देखना रुचिकर होगा कि विज्ञान और तकनीकी पर दिये गये बल के सन्दर्भ में पोजीशन पेपर और शिक्षा आयोग की रिर्पोट किन मायनों में समान है और किन मायनों में यह फ़रक़ है। दोनों दस्तावेज़ों की तीन महत्वपूर्ण समानताओं पर चर्चा पहले की गयी है।

पोजीशन पेपर में जो पहली महत्वपूर्ण बात कही गयी है वह है कि हमें आवश्यक रूप से आर्थिक वर्ग, लिंग, जाति, धर्म और क्षेत्रीयता जैसे भेदभावों को कम करने के लिए सामाजिक बदलाव के माध्यम के रूप में विज्ञान–पाठ्यक्रम का उपयोग करना होगा। दोनों ही दस्तावेज़ों में समता के लिए चिन्ता मज़बूती से उभर कर आती है और पोजीशन पेपर में अतिरिक्त रूप से यह भी सुझाया गया है कि पाठ्यपुस्तकें ऐसी होनी चाहिए जिन्हें समता के माध्यम के रूप में इस्तेमाल किया जा सके।

इसके अलावा दोनों दस्तावेज़ों में विज्ञान के सीखने–सिखाने की प्रक्रियाओं में बदलाव पर ज़ोर दिया गया है और इस बात को स्वीकारा गया है कि वर्तमान शिक्षण–अधिगम प्रक्रिया रटने पर बहुत ज़्यादा आधारित है और परीक्षा–व्यवस्था इस चीज़ को और बढ़ावा देती है। इसके बदले बच्चों में पड़ताल का कौशल विकसित करने की ज़रूरत है। कोठारी आयोग और पोजीशन पेपर के बीच में विज्ञान–शिक्षण की ज़मीनी स्थिति में स्पष्टतः कोई बदलाव नहीं आया है और बाद के दस्तावेज़ में कुछ पाठ्यक्रम सम्बन्धी और सह–पाठ्यचर्यीय गतिविधियाँ आयोजित करने और समग्र शैक्षिक माहौल में परिवर्तन की ज़रूरत महसूस की गयी है।

तीसरा समान बिन्दु यह है कि दोनों ही दस्तावेज़ों में शिक्षक सशक्तिकरण पर बल दिया गया है। पोजीशन पेपर में कहा गया है कि पाठ्यक्रम, पाठ्यपुस्तक और परीक्षाओं में सुधार का तब तक कोई मतलब नहीं है जब तक कि शिक्षक उन्हें आगे ले जाने में स्वयं को समर्थ न बना पायें। इस बदलाव की प्रक्रिया में शिक्षकों को प्राप्तकर्ता की बजाय भागीदार बनाने की ज़रूरत है क्योंकि सिखाने का बोझ उनके कन्धों पर है। इसी प्रकार शिक्षण आयोग की रिपोर्ट में शिक्षकों के प्रशिक्षण और गुणवत्ता पर और आधारभूत शोध में उनकी भागीदारी पर विशेष ज़ोर दिया गया है।

हालाँकि इन दोनों दस्तावेज़ों में तीन महत्वपूर्ण अन्तर भी हैं। ये अन्तर विज्ञान की परिवर्तित समझ और दुनिया से इसके सम्बन्ध से उत्पन्न होते हैं। कोठारी आयोग जहाँ विज्ञान, इसके शिक्षण और वैज्ञानिक एवं तकनीकी प्रगति के आधार पर राष्ट्र–विकास के सामर्थ्य के चलते विज्ञान के प्रति श्रद्धामय रवैया दिखाता है, वहीं पोजीशन पेपर काफ़ी सन्तुलित दस्तावेज़ है। साठ के दशक में विज्ञान ने स्वयं को क्रान्तिकारी विचार या जादुई छड़ी के रूप में प्रस्तुत किया था। हम ऐसा भी कह सकते हैं कि तब विज्ञान को केवल औद्योगिक विकास के माध्यम के रूप में नहीं देखा जाता था, बल्कि जीने के नये तरीक़ों और नयी विचार–प्रक्रिया का अगुआ भी माना जाता था। रिर्पोट में यह भी ज़िक्र किया गया है कि किस प्रकार विज्ञान–शिक्षण ने उस तार्किक सोच को जन्म दिया जो कि एक धर्मनिरपेक्ष, प्रजातान्त्रिक राष्ट्र के विकास के लिए ज़रूरी थी। दूसरी तरफ़ पोजीशन पेपर में यह चिन्ता ज़ाहिर की गयी है कि किसी भी अन्य शक्ति की तरह विज्ञान के ज्ञान से आने वाली शक्ति में भी अक्खड़पन और भ्रष्टाचार पैदा करने का सामर्थ्य है, जिसको रोकने की ज़रूरत है। यह शायद पिछले कुछ दशकों के अनुभवों का सबक़ है जब बेलगाम विकास की वजह से राष्ट्रीय और वैश्विक स्तर पर पर्यावरण को अपरिवर्तनीय क्षति पहुँची है। अनुभव यह भी दर्शाते हैं कि तकनीकी प्रगति तार्किक सोच के विस्तार, अन्धविश्वास या धार्मिक अन्धभक्ति के ख़ात्मे को सुनिश्चित नहीं करती।

इन दोनों दस्तावेज़ों में एक अन्य अन्तर विज्ञान की प्रकृति को परिभाषित करने और तकनीकी के साथ विज्ञान के सम्बन्ध को देखने के तरीक़े में है। शिक्षा आयोग की रिर्पोट में अक्सर विज्ञान के अनुप्रयोग के लिए "विज्ञान आधारित तकनीकी", "विज्ञान और तकनीकी" और तकनीकी जैसे वाक्यों का इस्तेमाल किया गया है। विज्ञान और तकनीकी शब्द इस दस्तावेज़ में काफ़ी इस्तेमाल किये गये हैं और इनमें फ़रक़ करने के लिए कोई प्रयास नहीं किया गया है। दूसरी तरफ़ पोजीशन पेपर में विज्ञान और तकनीकी में स्पष्ट अन्तर किया गया है और विज्ञान–शिक्षण के बारे में बात की गयी है, न कि तकनीकी प्रगति के लिए विज्ञान–शिक्षण की बात की है। इस दस्तावेज़ में इन दोनों में इस तरह से

फ़र्क़ किया गया है कि *"मूल रूप से विज्ञान एक असीमित पड़ताल है लेकिन इसके अन्तिम परिणाम तय नहीं हैं, दूसरी तरफ़ तकनीकी भी एक तरह की पड़ताल है लेकिन इसके पीछे सामान्यतया कोई निश्चित लक्ष्य होता है।"* जब हम विज्ञान–शिक्षण के उद्देश्यों की बात करते हैं तो यह अन्तर महत्वपूर्ण हो जाता है।

दोनों दस्तावेज़ों में तीसरा अन्तर विज्ञान–शिक्षण की विषयात्मक पद्धति से सम्बन्धित है। शिक्षा आयोग की रिर्पोट में स्कूलों में अपनायी जाने वाली "सामान्य विज्ञान–शिक्षण पद्धति'' से असन्तोष जताते हुए वैज्ञानिक आधार विकसित करने में इसे अप्रभावी माना गया है और इसीलिए कक्षा छह से आगे के विज्ञान–शिक्षण के लिए विषय सम्बन्धी पद्धति की सिफ़ारिश की गयी है। शिक्षा आयोग की रिपोर्ट यह भी सुझाती है कि तैयारी के हिसाब से कक्षा चार से ही रोमन अक्षर सिखाये जाने चाहिए ताकि बच्चे H_2O जैसे प्रतीकों से परिचित हो पायें। दूसरी तरफ़ पोजिशन पेपर में कक्षा दस तक सामान्य विज्ञान–शिक्षण की सलाह देते हुए केवल उच्च माध्यमिक स्तर पर विषय सम्बन्धित पद्धति अपनाने की बात की गयी है।

2. विज्ञान के बारे में नज़रिया

यह परचा एक सूक्ष्म शोध पर आधारित है। इसका आँकड़ा–संग्रहण मुख्यतः उदयपुर में किया गया। डाटा में बहुलता लाने के इरादे से कुछ बाहर के शिक्षकों से प्रश्नावली मेल पर भी भरवायी गयी। उदयपुर में डाटा, शिक्षकों और भावी शिक्षकों से भरवाया गया। डाटा–संग्रहण के लिए स्ट्रक्चर्ड प्रश्नावली तैयार की गयी, जिसमें विज्ञान और विज्ञान–शिक्षण पर सवाल शामिल थे।

2.1 विज्ञान की प्रकृति के बारे में प्रतिक्रियाएँ

शिक्षकों और भावी शिक्षकों द्वारा प्राप्त लिखित प्रतिक्रियाएँ विज्ञान नामक ज्ञान के पैकेज के प्रति सम्माननीय दृष्टिकोण इंगित करती हैं। विज्ञान क्या है, इस सवाल के जवाब में चार तरह की प्रतिक्रियाएँ सामने आयीं। पहला, विज्ञान को तार्किक रूप से व्यवस्थित ज्ञान के पैकेज के रूप में देखा जाता है। दूसरा, इसे ज्ञान के निर्माण की प्रक्रिया के रूप में देखा जाता है जिसमें प्रयोग और तार्किक चिन्तन शामिल है। तीसरा, विज्ञान को तकनीकी के समानार्थक के रूप में देखा जाता है और सबसे आख़िरी इसे ज्ञान के उस प्रकार के रूप में देखा जाता है जो कि रोज़मर्रा की ज़िन्दगी के लिए उपयोगी है।

- T+;knkrj f'k{kd vkSj f'k{kd&izf'k{kd foKku ds fy, vyx&vyx 'kCnksa vkSj okD;ka'kksa tSls Øfed :i ls lqO;ofLFkr] O;ofLFkr Kku] iz—fr dk Øec) Kku] Kku dk Hk.Mkj] fo'kky

Kku dk mi;ksx djrs gSaA bls Kku dss fof'k"V izdkj ds :i esa ns[kk tkrk gS tks fd vius rkfdZd :i ls O;ofLFkr gksus] lVhdiu] iz;ksxksa }kjk lR;kfir djus tSls ewY;ksa ds dkj.k fo'ks"k cu iM+rk gSA bls iz—fr ds fu;eksa ds lkj ds :i esa vkSj le>us ds rjhd+ksa ds :i esa ns[kk tkrk gS tks eqf'dy pht+ksa dks vklku cukrk gSA

- foKku dks ns[kus ds nwljs rjhds+ esa bls Kku&vtZu dh izfØ;k ds :i esa ns[kuk 'kkfey gSA ftu mÙkjnkrkvksa us foKku dks ,d izfØ;k ds :i esa crk;k mUgksaus iz;ksxksa dh ckr dh gSA muds vuqlkj iz;ksx fdlh pht+ dks lR;kfir ;k lkfcr djus dk ,d rjhd+k gSA foKku dks tks rF; fo'ks"k cukrk gS og ;g gS fd bl Kku dks iz;ksxksa ds }kjk lR;kfir fd;k x;k gS vkSj blhfy, ;g lgh gSA ;g rF; fd fdlh pht+ dks iz;ksxksa }kjk fl) fd;k x;k gS] mls lR; vkSj fo'oluh; cukrk gSA

प्रयोग चीज़ों को सही सिद्ध करने का एक माध्यम है। यदि प्रयोग उचित तरीक़े से किया गया है तो वह सही ज्ञान देगा। विशिष्ट संस्थानों में, ख़ास तरह की प्रयोगशालाओं में विशेष ढंग से विशेषज्ञों द्वारा सिद्ध किया गया ज्ञान। विज्ञान को विशेष इसलिए भी माना जाता है क्योंकि यह अनुसंधान केन्द्रों में प्रयोगों के द्वारा जन्म लेता है या सत्यापित होता है और इसलिए यह अर्थपूर्ण और तार्किक है।

मात्र एक शिक्षक ने अपने उत्तर में इस बात की ओर इशारा किया कि विज्ञान चीज़ों और परिस्थितियों के विश्लेषण का तार्किक तरीक़ा है।

- foKku dks rduhdh dk lekukFkZd ekuuk bls ns[kus dk rhljk rjhd+k gSA ;gkį foKku dks gj {ks= esa fodkl ;k fodkl ds ek/;e ds :i esa ns[kk x;k FkkA dqN mÙkjnkrkvksa us foKku dks v/;;u dss ,d izdkj ds :i esa crk;k] tgkį ekuo&thou dks vkSj vkjkenk;d cukus ds fof'k"V iz;kstu ls iz—fr ds fu;eksa dks le>k tkrk gSA bl ut+fj;s dk eryc ;g Hkh gS fd foKku gekjs pkjksa rjQ+ ekStwn gS ;k ledkyhu ;qx dks foKku dk ;qx dgk tk ldrk gSA

- foKku dks ns[kus dk vkf[k+jh rjhd+k gS & bls mi;ksxh Kku ds :i esa ns[kukA ;gk¡ foKku dks ftl rjg ls ns[kk x;k gS mlesa iks"k.k] LoPNrk vkfn dk Kku 'kkfey Fkk] tks jkst+ejkZ ds thou vkSj fu.kZ; ysus dh izfØ;kvksa dks vkSj voxr cukrk gSA dqN f'k{kdksa us ;g Hkh crk;k fd oSKkfud Kku fdl rjg ls gesa T+;knk tkx:d cukrs gq, /kks[kk/kM+h vkSj vU/kfo'oklksa ls cpkrk gS(bldk ,d mnkgj.k gS uhcw dkVdj Hkwr&izsrksa dh mifLFkfr fn[kkus dk LokaxA bl rjg ds Hkqykos ls cpus ;k muds izfr vkxkg gksus dh ppkZ dbZ f”k{kdksa us dhA

सबसे ज़्यादा प्रतिक्रिया यही प्राप्त हुई कि वैज्ञानिक ज्ञान सही और शुद्ध है। कुछ छात्र–शिक्षक ऐसे भी थे जिनका मानना था कि अन्य विषयों की तरह विज्ञान का ज्ञान भी कभी–कभी ग़लत हो सकता है। कुछ ऐसी प्रतिक्रियाएँ भी प्राप्त हुईं जो कुछ निश्चित घटनाओं की व्याख्या में वैज्ञानिक ज्ञान की सीमाओं का ज़िक्र करती हैं। यह आमतौर पर तब भी होता है जब हम उन विश्वासों की बात करते हैं जिन्हें तार्किक पड़ताल में सही नहीं ठहराया जा सकता है। कुछ छात्र–शिक्षकों ने ज़िक्र किया कि किस तरह से विज्ञान कुछ चमत्कारों, धर्म और परम्पराओं की व्याख्या करने में अक्षम है। यह दर्शाता है कि किस तरह विज्ञान–शिक्षण से ज्ञान और जागरूकता तो आती है लेकिन विज्ञान मौजूदा धारणाओं और मूल्यों में हस्तक्षेप के बहुत थोड़े मौक़े देता है।

इन चारों प्रतिक्रियाओं में हम देखते हैं कि विज्ञान को आराम और जागरूकता के द्वारा जीवन–शैली में सुधार के संसाधन के रूप में देखा गया है। हमारे आसपास गैजेट्स और अन्य तकनीकी घटनाओं की इतनी भारी तादाद में मौजूदगी विज्ञान के प्रभुत्व को सिद्ध करती है और इसे ज्ञान का विशिष्ट क्षेत्र बनाती है। यह इस बात का भी समर्थन करता है कि उत्तरदाता विज्ञान और तकनीकी को समानार्थी मानते हैं।

वैज्ञानिक साक्षरता को यदि आसान शब्दों में समझने की कोशिश की जाये तो इसका अर्थ होगा सवाल पूछने की क्षमता, रोज़मर्रा की ज़िन्दगी से उठने वाले सवालों के उत्तर ढूँढना, प्राकृतिक घटनाओं को समझने की कोशिश करना न कि उन्हें चमत्कार मान लेना, तथ्यों के आधार पर फ़ैसला लेने की क्षमता आदि। शिक्षकों के उत्तरों में वैज्ञानिक साक्षरता की एक हलकी–सी झलक मिलती है (डॉसन एण्ड वेनविली, 2009; खान, 2018 से)।

छात्र–शिक्षकों द्वारा विज्ञान की अन्य महत्वपूर्ण विशेषता जो बतायी गयी थी वह थी इसका "व्यवहारिक/प्रायोगिक" या वास्तविक होना। विज्ञान को रोज़मर्रा के जीवन की चीज़ों के ज्ञान और रोज़ के निर्णय लेने के लिए उपयोगी ज्ञान के रूप में देखा गया। प्रतिक्रियाओं में व्यवहारिक (Practical) होने के अर्थ में प्रायोगिक (Experimental) होने और व्यावहारिक (Pragmatic) होना, दोनों का सम्मिश्रण पाया गया। इस बात को और बेहतर रूप से समझने की ज़रूरत है कि इस तरह की प्रतिक्रियाओं का कितना सम्बन्ध पाठ्यक्रम से है। पाठ्यक्रम में प्रक्टीकल्स आमतौर पर चिर–परिचित प्रयोगों में ठीक और सटीक मापन करने तक सीमित होते हैं।

2.2 शिक्षक प्रयोगों को कैसे समझते हैं?

शिक्षकों द्वारा प्रयोग एक तरफ़ तो कुछ सिद्धान्तों को सत्यापित करने के माध्यम के रूप में देखे गये, वहीं दूसरी तरफ़ आविष्कारों के तरीक़ों के रूप में देखे गये। यह लक्षण विज्ञान को अन्य विषयों से अलग बनाता है।

उत्तरदाताओं की प्रतिक्रियाओं में "प्रयोग" और "उपयोग" जैसी धारणाओं में महत्वपूर्ण सम्मिश्रण पाया गया। हिन्दी (भाषा जिसमें उत्तरदाताओं की प्रतिक्रियाएँ एकत्रित की गयी थीं) में प्रयोग के दो मतलब होते हैं, प्रयोग (Experiment) और उपयोग (Utilization) जो कि सन्दर्भ पर निर्भर करता है। बोलचाल की भाषा में अक्सर इसका मतलब होता है किसी चीज़ को काम में लेना और विज्ञान सीखने–सिखाने के सन्दर्भ में इसका मतलब होता है "प्रयोग"। इसलिए प्रतिक्रियाएँ इंगित करती हैं कि कुछ उत्तरदाताओं ने इसे 'विज्ञान के उपयोग' रूप में समझा होगा। इससे यह भी प्रतीत होता है कि उनके लिए प्रयोग विज्ञान के शिक्षणशास्त्र का निहित हिस्सा नहीं है। इसका मतलब जीवन में आविष्कारों और अवधारणाओं के उपयोग के रूप में समझा गया हो सकता है। कुछ के लिए इसका मतलब था रोज़मर्रा के जीवन में शुद्ध मापन और रसायनों का मिश्रण करना। प्रयोग शब्द को दूसरे तरीक़े से इस तरह से समझा गया कि कोई अपने हाथों से कुछ कर के देखे। एक उत्तरदाता ने इसका उदाहरण भी दिया कि जैसे डॉक्टर किस तरह से स्वयं अपने हाथों से चीज़ें कर के सीखते हैं। प्रशिक्षण और वास्तविक जीवन में उपयोग की तैयारी के लिए इसे विज्ञान का बहुत महत्वपूर्ण हिस्सा माना जाता है। कई उत्तरदाताओं के अनुसार प्रयोग सम्बन्ध स्थापित करने, कारण खोजने, नयी खोज और आविष्कार करने, रासायनिक गुणधर्म ढूँढने, सत्यापन के लिए विशेषताएँ खोजने आदि के माध्यम हैं। उत्तरदाताओं के अनुसार किसी भी नयी तकनीकी को सार्वजनिक करने से पहले और ये सुनिश्चित करने के लिए कि इसके कोई हानिकारक प्रभाव तो नहीं है, प्रयोग करना ज़रूरी है। प्रयोग को पुराने स्थापित सिद्धान्तों की शुद्धता जाँचने के माध्यम के रूप भी देखा गया।

पाठ्यपुस्तक और पाठ्यक्रम को गौर से देखें तो हम पायेंगे कि उच्च शिक्षा स्तर पर भी जब उन्हें प्रयोग जैसा कोई काम दिया गया तो उसमें परिकल्पना–निर्माण के लिए अन्वेषण या अवलोकन का विश्लेषण जैसी कोई चीज़ नहीं थी, जबकि यदि शिक्षकों को प्रयोग करवाने के उद्देश्य पता हों तो यह प्राथमिक कक्षाओं में भी करवाये जा सकते हैं (दीवान, 1995)।

एक और मज़ेदार बात ये है कि जहाँ ज़्यादातर उत्तरदाताओं ने वैज्ञानिक ज्ञान के प्रयोग आधारित होने और इसीलिए विश्वसनीय होने की बात कही है, वहीं 40 में से केवल 4 ने विज्ञान सीखने–सिखाने की प्रक्रियाओं में प्रयोग के महत्व के बारे में बात की है। (यहाँ पर प्रयोगों की ज्ञानमीमांसीय भूमिका और इसके एक शिक्षाशास्त्रीय माध्यम होने में भ्रम है।)

वैसे 'कर के सीखो' विज्ञान सीखने के सबसे प्रमाणित तरीक़े के रूप में स्वीकृत है। परन्तु प्राथमिक और उच्च प्राथमिक कक्षाओं की सच्चाई फिर भी 'पाठ्यपुस्तक' को पढ़ने और 'शिक्षक को सुनने' तक सीमित है। ऐसा लगता है कि पाठ्यक्रम और पाठ्यपुस्तक–निर्माता, बच्चों के संज्ञानात्मक विकास के सिद्धान्तों को दरकिनार कर अपना काम करते रहे (दीवान, 2018)।

2.3 पाठ्यक्रम और इसकी व्यवस्था के बारे में प्रतिक्रियाएँ

विज्ञान–पाठ्यक्रम और इसकी व्यवस्था को ले कर शिक्षकों और छात्र–शिक्षकों की प्रतिक्रियाओं को निम्नलिखित दो श्रेणियों में बाँटा जा सकता है :

- igyh rjg dh izfrfØ;kvksa esa ikB~;Øe&O;oLFkk dk vk/kkjHkwr ekun.M oSKkfud Kku dh lh[kus okys ds fy, mi;ksfxrk gSA izkFkfed d{kkvksa esa ,sls fo"k; i<+kus dh t+:jr gS tks cPpksa ds Lo;a ds lkeF;Z vkSj thou esa mi;ksxh gS] tSls [ksyrs le; pksV yx tkus ij D;k djuk pkfg,A mPp izkFkfed d{kkvksa esa D;ksafd mi;ksfxrk dk nk;jk O;kid gks tkrk gS blfy, ikB~;Øe esa ,slh pht+ksa ds fy, LFkku gksuk t+:jh gS tks cPpksa dks ;g le>us esa enn djsa fd orZeku ;qx foKku dk ;qx gS] thou esa foKku vkSj rduhdh dk mi;ksx dSls djsa vkSj og thou esa blds egRo dks le> ik;saA

- nwljs rjg dh izfrfØ;k,¡ lq>krh gSa fd izkFkfed d{kkvksa dk ikB~;Øe lk/kkj.k vkSj cPpksa ds vius ifjos'k ij vk/kkfjr

gksuk pkfg,] tSls isM+&ikS/ks vkSj tkuojA vkSj fQj mPp izkFkfed Lrj rd vkrs&vkrs blesa vkdkj] dk¡p vkSj ySal] i`Foh dk ?kw.kZu] lkSje.My vkSj rkjke.My] xfr ds fu;e] oSKkfudksa ds ckjs esa tkudkjh vkfn pht+sa gksuh pkfg,A ek/;fed d{kkvksa dk ikB~;Øe vkxs ds thou esa O;kolkf;d rS;kjh ij vk/kkfjr gksuk pkfg,A blesa 'kkfey ,d izfrfØ;k lq>krh gS fd izkFkfed Lrj dk foKku lk/kkj.k pht+ksa dks le>us esa cPpksa dh enn djrk gS vkSj ek/;fed Lrj ij foKku bl rjg ls i<+k;k tkuk pkfg, fd fo|kfFkZ;ksa dks MkWDVj ;k bathfu;j cuus esa lQyrk feysA

अधिकांश उत्तरदाताओं ने कुछ विषय सूचित किये जिन्हें वे प्राथमिक, उच्च प्राथमिक और माध्यमिक स्तर की कक्षाओं पर पढ़ाये जाने की ज़रूरत समझते हैं लेकिन विभिन्न स्तरों पर अवधारणाओं के विकास या वैज्ञानिक कौशल सिखाने की ज़रूरत पर उनकी कोई स्पष्ट दिलचस्पी नहीं दिखायी दी। उत्तरदाताओं ने अवधारणाओं और वैज्ञानिक कौशलों के वर्गीकरण या जुड़ाव के बारे में, वैज्ञानिक कौशलों के पाठ्यचर्या या विषयवस्तु–चयन का मानदण्ड होने के बारे में कोई सचेतता ज़ाहिर नहीं की। सार करने की, तर्क में और ज़्यादा चरणों को समझने की क्षमता, विचारों की शृंखला का अनुसरण, किसी एक घटना को समझने के लिए विविध या सम्बद्ध अवधारणाओं को जोड़ कर कड़ी बनाना, सूचनाओं या डाटा को एकत्र करना, अवधारणाओं और उनके सम्बन्धों को एक विकसित होती क्षमता के रूप में देख पाना आदि बातें, उत्तरदाताओं के जवाबों में पूरी तरह से ग़ायब थीं।

एक प्रतिक्रिया हालाँकि मज़ेदार और दूसरों से अलग थी क्योंकि उसमें वैज्ञानिक प्रक्रियाओं के विकास को विज्ञान–शिक्षण का उद्देश्य बताया गया था। उन शिक्षक ने बताया कि प्राथमिक कक्षाओं का विज्ञान बच्चों को अपने परिवेश के बारे में और ज़्यादा परिचित करवाने वाला और बच्चों की स्वाभाविक जिज्ञासाओं को शान्त करते हुए उनकी अवलोकन–क्षमता को पैना बनाने वाला होना चाहिए। उच्च प्राथमिक कक्षाओं में विज्ञान बच्चों के दैनिक जीवन से जुड़ा होना चाहिए और इसमें उनकी समझ को बढ़ाने के माध्यम के रूप में छोटे प्रयोग शामिल होने चाहिए। मध्य स्तर पर प्रयोग वैज्ञानिक नज़रिया विकसित करने में सक्षम होने चाहिए और साथ ही वैज्ञानिक विकास से होने वाले नफ़े–नुक़सान के बारे में भी उनकी समीक्षात्मक समझ बन जानी चाहिए। माध्यमिक कक्षाओं में वैज्ञानिक

अवधारणाओं को और गहरायी से पढ़ाने की ज़रूरत है और इसीलिए इस स्तर पर विज्ञान के विभिन्न विषयों से बच्चों को अवगत करवाया जाना चाहिए। उच्च माध्यमिक कक्षाओं में वैज्ञानिक कौशलों और विकसित होने वाली अवधारणाओं में तालमेल होना चाहिए। यह प्रतिक्रिया इसमें क्या शामिल और क्या नहीं, इससे ख़ास नहीं बनी, बल्कि यह तथ्य ज़्यादा महत्वपूर्ण है कि 40 में से केवल इसी प्रतिक्रिया में विषय की प्रकृति से विषयवस्तु के चयन या इसकी व्यवस्था के मानदण्ड भी निकाले गये।

ऐसा लगता है कि पाठ्यक्रम–व्यवस्था के प्रचलित सिद्धान्त, पॉलिसी दस्तावेज़ों में दिये सिद्धान्तों से बिलकुल अलग हैं। अच्छे विज्ञान–शिक्षण के बारे में हमें जो कुछ भी पता है, उसे किनारे करते हुए, जो सिद्धान्त सामने आते हैं वह हैं सरल से जटिल की ओर, पास से दूर की ओर और ज्ञान के विस्फोट में आगे बढ़ते रहने की चिन्ता (दीवान, 2018)।

3.0 आधिकरिक संवाद से महत्वपूर्ण विचलन

शिक्षकों और भावी शिक्षकों की प्रतिक्रियाएँ भारत में विज्ञान–शिक्षण को ले कर होने वाले अधिकारिक संवाद से बहुत फ़र्क़ हैं। इस ज़ाहिर अन्तर को समझने के लिए ऊपर के हिस्सों में दिये गये उदाहरणों की मदद ली जा सकती है। शिक्षा आयोग की रिपोर्ट और पोजिशन पेपर दोनों में प्रयोगों को विज्ञान–शिक्षण की अधिगम प्रक्रियाओं के अभिन्न हिस्से के रूप में देखा गया है। शिक्षा आयोग की रिपोर्ट में प्रयोगों के साथ अन्वेषण की भावना (पृष्ठ 7) विकसित करने की बात भी कही गयी है। इसमें इस बात पर भी खे़द जताया गया है कि पढ़ाने की प्रक्रियाओं में प्रयोगशाला–कार्य एक कमज़ोरी बन कर रह जाता है और जो भी प्रयोग या प्रयोगशाला–कार्य करवाये जाते हैं; वे केवल प्रमाणित करने वाले होते हैं, अनुसंधान सम्बन्धी नहीं। इसी प्रकार पोजिशन पेपर में प्रयोगों को विज्ञान और विज्ञान–शिक्षण का हॉलमार्क बताया गया है।

स्कूली प्रयोगों के वास्तविक पहलू वास्तविक वैज्ञानिक खोजबीन से निकालने की ज़रूरत है जो कि किसी समस्या पर आधारित हों, सवाल पूछने और सही अवलोकन करने की क्षमता पर निर्भर हों और साथ ही अलग–अलग भी हों। प्रयोग जहाँ एक तरफ़ विज्ञान सीखने–सिखाने की प्रक्रियाओं में शिक्षाशास्त्रीय माध्यम है और व्यक्तिगत और कक्षा–कक्षीय स्तर पर ज्ञानमीमांसीय पड़ताल को शुरू करने का माध्यम है, वहीं यह पाठ्यक्रम के व्यापक ढाँचे में भी है और बच्चे जो कुछ अवलोकन और विश्लेषण कर सकते हैं उससे भी ज़्यादा प्राप्त करने की ज़रूरत है (सक्सेना, 2006)। स्कूलों में किये जाने वाले प्रयोग अक्सर वे प्रदर्शन होते हैं जहाँ पर गतिविधि का परिणाम पहले से ही ज्ञात होता है। हालाँकि परिणाम ज्ञात होता है लेकिन फिर भी खुले अवलोकन, परिकल्पना–निर्माण और

अवलोकन के विश्लेषण को प्रोत्साहित करने की ज़रूरत होती है। अक्सर प्राथमिक, उच्च प्राथमिक और यहाँ तक कि माध्यमिक स्तर के विद्यालयों में भी प्रयोगशाला, आधारभूत प्रयोग करवाने की सामग्री और शिक्षक–तैयारी जैसे संसाधन उपलब्ध नहीं होते हैं (दीवान, 1995)। पिछले पाँच दशकों में विज्ञान–पाठ्यक्रम में जो एक मुख्य प्रचलन रहा है, वह जानकारी में निरन्तर बढ़ाव का रहा है (मुखर्जी, 2017)। सम्भवतः यह कोठारी कमीशन को ग़लत समझने का असर भी हो सकता है (दीवान, 2018)। जैसा कि हमने देखा, रिपोर्ट में यह कहा गया है कि वैज्ञानिक ज्ञान निरन्तर बढ़ रहा है, इसका एक सतही निष्कर्ष यह हो सकता है कि हमें अपने बच्चों को और ज़्यादा ज्ञान से परिचित करवाने की आवश्यकता है।

जैसा कि हम जानते हैं कि विज्ञान, मानवता द्वारा आज तक अर्जित ज्ञान का ढाँचा भी है और ये ज्ञान को उत्पन्न करने और प्रमाणित करने का एक तरीक़ा भी है। शिक्षकों की धारणाएँ इंगित करती हैं कि सीखने की प्रक्रिया सूचनाओं के आदान–प्रदान की तरफ़ बहुत ज़्यादा आधारित हैं। शिक्षा आयोग की रिपोर्ट में भी इसका ज़िक्र किया गया है।

एक तरफ़ यह रिपोर्ट मौजूदा ज्ञान और जिस गति से यह वैज्ञानिक ज्ञान बढ़ रहा है इसकी अति प्रशंसा करती है, वहीं दूसरी तरफ़ यह आगाह भी करती है कि नये ज्ञान के निर्माण से बहुत सारा पुराना ज्ञान बेकार होता जा रहा है, इसलिए सीखने–सिखाने की प्रक्रियाएँ ज़्यादा जानकारी पाने वाली न हो कर पड़ताल के वैज्ञानिक तरीक़ों पर आधारित होनी चाहिए।

क्योंकि शिक्षकों की विज्ञान के बारे में धारणाएँ स्थायी हैं अतः ये; कौशल और अवलोकन, पैटर्न पहचानने, परिकल्पना बनाने, परिणाम निकालने, सिद्धान्तों को सत्यापित या खारिज करने जैसी वैज्ञानिक प्रक्रियाओं से शिक्षाशास्त्रीय ध्यान हटाते हुए ज्ञान के पैकेज के हस्तान्तरण की तरफ़ ध्यान ले जाती हैं। परीक्षा–व्यवस्था पिछले पचास वर्षों से भी ज़्यादा समय से चिन्ता का विषय रही है। शिक्षा आयोग, पोजिशन पेपर और वर्तमान परीक्षा–सुधार ये सभी एक समान चिन्ताओं से संघर्षरत हैं। ज्ञात ज्ञान को रटने और पुनर्उत्पादित करने पर बहुत ज़्यादा ज़ोर है जिसकी वजह से शिक्षण–अधिगम प्रक्रिया भी प्रभावित होती है। इस तरह से एक तरफ़ शिक्षाशास्त्र और शिक्षकों की धारणाओं का अधिकारिक संवाद से मतभेद प्रतीत होता है परन्तु ये प्रचलित परीक्षा आधारित शिक्षा–व्यवस्था के अनुरूप हैं।

शिक्षाशास्त्रीय व्यवहार कुछ मायनों में तो शिक्षक–तैयारी की प्रक्रिया से प्रभावित है पर व्यापक रूप से यह उस पारम्परिक शिक्षाशास्त्र का परिणाम है जो शिक्षक अपने साथ ले कर कक्षा–कक्ष में जाता है। इन दोनों में बदलाव लाने में बहुत

लम्बा समय लगेगा। तो, एक शिक्षक जो किसी तरीक़े विशेष में पढ़ा है, जो एक ऐसे समाज का हिस्सा है जहाँ 'कैसे' की बजाय 'क्या और क्यों' जैसे ज्ञान का ज़्यादा महत्व है, वह अन्त में प्रक्रिया आधारित शिक्षण की बजाय विषयवस्तु आधारित शिक्षण ही कर पायेगा। सेवापूर्व और सेवाकालीन दोनों ही प्रकार के शिक्षक–प्रशिक्षक कार्यक्रमों को शिक्षकों और शिक्षकों के पास पहले से उपलब्ध पारम्परिक शिक्षाशास्त्र (Folk pedagogies) और एक सुदृढ़ स्कूल स्तरीय विज्ञान–शिक्षण कार्यक्रम की अपेक्षाओं के बीच की खाई को समझना होगा।

अन्य कारक जैसे शिक्षकों के ज्ञान पदानुक्रम पर आधारित प्रचलित विद्यार्थी–शिक्षक सम्बन्ध भी महत्वपूर्ण है। अन्वेषण और स्वाधिगम पर आधारित शिक्षा शास्त्र इस सम्बन्ध को भी प्रभावित करेगा।

निष्कर्ष

पर्चे में विज्ञान–शिक्षण के बारे में आधिकारिक संवाद और शिक्षकों की धारणा को समझने और दोनों के बीच तुलना करने की कोशिश की गयी है। इससे तीन दिलचस्प चीज़ें निकल कर आयीं। सबसे पहले, 1964 से 2006 तक के आधिकारिक संवाद में हालाँकि सतह पर बहुत अधिक परिवर्तन नहीं दिखता है, लेकिन वास्तव में एक महत्वपूर्ण बदलाव आया है। इस संवाद में वैज्ञानिक प्रगति से हुए लाभ के बारे में अन्धभक्ति में कमी आयी है और यह अधिक सन्तुलित हो गया है। विज्ञान के विकास से जहाँ उत्पादकता और भौतिकवादी समृद्धि हो सकती है, वहीं समता, तर्कसंगत दृष्टिकोण और हाशियाकृत लोगों के सशक्तिकरण जैसे प्रगतिशील सामाजिक लक्ष्यों को आगे ले जाने में विज्ञान की भूमिका बहुत कम दिखती है।

दूसरी महत्वपूर्ण खोज यह है कि कई सरकारी और ग़ैर–सरकारी प्रयासों के बावजूद विज्ञान–शिक्षा की ज़मीनी वास्तविकता में पिछले पचास वर्षों में ज़्यादा बदलाव नहीं आया है। दोनों दस्तावेज़ों में उठायी गयी चिन्ताएँ समान थीं : परीक्षा–प्रणाली, शिक्षक–तैयारी, स्कूलों में प्रयोगों और व्यावहारिक कार्य की कमी आदि।

तीसरा, शिक्षकों की धारणा आधिकारिक संवाद से काफ़ी अलग है। विज्ञान की शिक्षकों की समझ काफ़ी हद तक विज्ञान के ज्ञान–पैकेज के बारे में है और यह एक तरह से शिक्षण–अधिगम की प्रक्रिया में प्रयोगों की कमी बताती है और जो कुछ भी किया जाता है वह प्रदर्शन या सत्यापन के लिए अधिक होता है। यह एक तरफ़ सेवापूर्व और सेवाकालीन शिक्षक–तैयारी, दोनों के लिए चिन्ता का विषय है लेकिन दूसरी तरफ़ स्कूलों में सही प्रकार के संसाधनों के प्रावधान के लिए भी चिन्ता ज़ाहिर करता है।

सन्दर्भ सूची :

1. एन.सी.ई.आर.टी. (2005)। *नेशनल करिकुलम फ्रेमवर्क 2005*। नयी दिल्ली : नेशनल काउंसिल ऑफ़ एजुकेशनल रिसर्च एण्ड ट्रेनिंग। http:// epathshala.nic.in/wpcontent/doc/NCF/Pdf/nf2005.pdf पर भी उपलब्ध।

2. एन.सी.ई.आर.टी. (2006)। *पोजीशन पेपर : नेशनल फोकस ग्रुप ऑन दि टीचिंग ऑफ़ साइंस*। नयी दिल्ली : नेशनल काउंसिल ऑफ़ एजुकेशनल रिसर्च एण्ड ट्रेनिंग। http:// epathshala.nic.in/wp-content/doc/NCF/Pdf/science.pdf पर भी उपलब्ध।

3. गवर्नमेंट ऑफ़ इण्डिया (1966)। *रिर्पोट ऑफ़ दि एजुकेशन कमीशन*। नयी दिल्ली : मिनिस्ट्री ऑफ़ एजुकेशन।

4. ब्रूनर (1996)। *दि कल्चर ऑफ़ एजुकेशन*। कैम्ब्रिज, एम.ए. : हार्वर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस।

5. दीवान (1995)।

6. दीवान (2018)। "व्हाई अ डिफ़रेंट अप्रोच टू साइंस?" *टीचिंग वॉइसेज़ ऑफ टीचर्स एण्ड टीचर्स–एजुकेटर्स* 6 (2)।

7. खान (2018)। "साइंस, साइंटिफिक लिट्रेसी एण्ड साइंटिफिक टैम्पर इन दि करीकुलर डॉक्युमेंट्स।" *टीचिंग वॉइसेज़ ऑफ टीचर्स एण्ड टीचर्स–एजुकेटर्स* 6 (2)।

8. सक्सेना (2008)। "कवेश्चन्स ऑफ़ इपिस्टमलोजी : रीइवैल्युटिंग कन्सट्रक्टविज़्म एण्ड दि एन.सी.एफ. 2005।" *कन्टेम्परेरी एजुकेशन डॉयलॉग* 4 (1)।

9. मुखर्जी 2017)। "रिफ्लेक्शन्स ऑन स्कूल साइंस।" *टीचिंग वॉइसेज़ ऑफ टीचर्स एण्ड टीचर्स–एजुकेटर्स* 6 (1)।